REVIEW OF RESEARCH
IMPACT FACTOR : 5.7631(UIF) UGC APPROVED JOURNAL NO. 48514 ISSN: 2249-894X
VOLUME - 8 | ISSUE - 6 | MARCH - 2019

समकालीन हिंदी दलित साहित्य : एक विश्लेषण कहानी के सन्दर्भ में

डॉ.एम्.एच. हंचिनाल
कला,विज्ञान एवं वणिज्य,शासकीय महाविद्यालय सखाली – गोवा.

प्रस्तावना–

दलित साहित्य वह लेखन है, जो वर्ण व्यवस्था के ख़िलाफ़ में तथा उसके विपरीत मूल्यों के प्रति संघर्ष रत मनुष्य से प्रतिबध्द है। वर्ण व्यवस्था अर्थात मत्सर, शत्रुता, द्वेष, तिरस्कार की भावना तथा इसके विपरीत मूल्यों अर्थात समता, बंधुत्व, प्रेम, भाईचारे शांति और समृध्दता का प्रतीक है। काल के प्रवाह में अपने समय को पहचानता अपने समय के प्रति ईमानदार होना ही 'समकालीनता' की निशनी है । समकालीनता 'युग सन्दर्भों में प्रासंगिक तो होती ही है साथ ही आधुनिक जीवन मूल्यों से भी जुड़ती जाती हैं। समकालीन शब्द इस बात का सूचक है कि प्रस्तुत कला समसामयिक संदर्भों से जुड़ी हुई है, साथ ही यह युग, विशष के संदर्भों के अनुसार बदली हुई चेतना या मानसिकता की भी द्योतक है । स्थायी जीवन मूल्यों की उपस्थिति के कारण यह कला काल की सीमाओं को भी छू जाती है। समकालीनता की इस परिभाषा के आधार पर समकालीन हिन्दी कहानी से हमारा तात्पर्य उस कहानी के क्रियाकलाप से है जिस में युगीन संदर्भों के अनुसार एक नयी कहानी का आविर्भाव भाव दिखाई देता है ।

इस समाज में मनुष्य प्रारंभ से ही अपने परिवेश को लेकर संवेदनशील रहा है। अपनी अनुभूति को प्रस्तुत करने के लिए उसने उपलब्ध साधनों का भरपूर प्रयोग किया है। ज्ञान के हस्तांतरण की प्रक्रिया ने विचार-विमर्श के क्षेत्र में आन्दोलनकारी भूमिका का निर्वाह किया है तथा इस समाज की हर जातियों को इस बात का आभास दिलाया कि वे इस परिवर्तन में समानता के भागीदार है। वास्तव में इस समाज के अनेक जातियों को परिवर्तन की प्रक्रिया का भागीदार बनाया है या यों ही उन्हें अपने साथ मान लिया है। यहाँ हमारा आशय उस वक्त से है जो आपके सामाजिक, सांस्कृतिक तथा राजनैतिक बदलाव की प्रक्रिया में एक मुख्यधारा के रूप में 'दलित' चुनौती बन कर खड़ा है, जिस पर विचार-विमर्श करना बौध्दिक जगत के लिए अनिवार्य हो गया है।

ज्योतिबा फुले, स्वामी अछुतानंद तथा डॉ. बाबा साहेब अम्बेडकर ने वर्ण व्यवस्था का विरोध कर दलित पुनर्जागरण और व्यवस्था बदलाव के लिए क्रांतिकारी साहित्य का सृजन किया, और जिसके कारण हज़ारों वर्ष के मूक मनुष्य को 'दलित साहित्य' के माध्यम से वाणी मिली है। सामाजिक परिवर्तन न्याय-यथार्थ, ममता, लौकिक एवं वैज्ञानिक प्रतिमानों को आधार मानकर तथा सवर्णवादी व्यवस्था के ख़िलाफ़ आक्रोश, सामंती आतंक, यथार्थ एवं अत्याचार का विरोध करते हुए भारतीय साहित्य में दलित साहित्य का एक मुख्य आयाम बनकर खड़ा हुआ है। भारतीय साहित्य के विभिन्न विधाओं में दलित चेतना प्रवाहित हुई है। दलित साहित्य का मुख्य लक्ष्य अपने समुदाय को पराधीनता की परम्पराओं से मुक्ति दिलाना है।

समकालीन कहानी जहाँ मानवीय जीवन की आपाधापी संघर्ष चेतना और परिवर्तित मूल्यबोध एवं स्त्री-पुरुष के नये मानमूल्यों से जुड़ी है वह निसन्देह पुरानी कहानियों से अलग है। वैसे भी आधुनिक कहानी पुरानी कहानी की तुलना में छोटी और संक्षिप्त होती है। पुरानी कहानी में अलौकिक और अति प्राकृत तत्वों की प्रधानता होती थी, आधुनिक कहानी लौकिक और जीवन के यथार्थ को महत्व देती है।

पुरानी कहानी चमत्कार और अविश्वसनीयता पर भरोसा करती थी, आधुनिक कहानी ने स्वाभाविकता और विश्वसनीयता का मार्ग अपनाया। पुरानी कहानी में कौतूहल, जिज्ञासा और उत्सुकता बनाए रखने के लिए अप्रासंगिक करतब भी हुआ करते थे, आधुनिक कहानी ने सहजता, प्रामाणिकता और जीवन्तता को महत्व दिया। पुरानी कहानी अकसर ही तार्किकता के बन्धन से मुक्त होती थी, आधुनिक कहानी का न केवल अपना एक रचनात्मक तर्क होता है बल्कि वह बौद्धिक तार्किकता को भी सन्तुष्ट करती है।"१

"उन्नीसवीं शताब्दी से ही भारत में 'दलित' शब्द का प्रयोग इस विशिष्ट अर्थ में आरंभ हुआ। परंतु 'दलितवन' भारतीय समाज में अत्यंत प्राचीन है। प्राचीन साहित्य में शूद्र, अतिशूद्र चांड़ाल अत्यंज व अस्पृश्य आदि शब्दों का प्रयोग किया गया है। इसमें स्पष्ट विदित होता है कि चातुर्वर्ण्य व्यवस्था में निचली जाति के अस्पृश्य हरिजन को ही सच्चे अर्थ में दलित कहा जा सकता है।"२

साहित्य जगत के इतिहास को देखे तो कहानी को सामाजिकता से जोड़ने का प्रयास प्रेमचंद ने किया। घीसू, माधव जैसे पात्रों का सृजन कर जीवन की वास्तविकताओं का साक्षात्कार प्रेमचन्द ने कराया और कहानियों को सामाजिकता से जोड़ कर जो भूमिका तैयार की उसमें सभी कथाकारों ने अपना-अपना योगदान दिया।

हिंदी दलित साहित्य के शुरुआत में ज्यादातर कविताएँ ही लिखी गयी है। मगर सातवें दशक में अनेक दलित लेखकों ने कहानी विधा को अपनाया। इन लेखकों में से मोहनदास नैमिशराय जी की कहानी 'सबसे बड़ा सुख' को प्रथम कहानी मानते हैं। कुछ ही समय में ओमप्रकाश वाल्मीकि जी की 'अँधेरी बस्ती' कहानी पाठकों को आसक्त करती हुई नज़र आती है। हिंदी दलित कहानी की यात्रा आठवें दशक में बहुत तेजी से उभरी है। और अनेक नए दलित रचनाकार उभरकर अपनी उपस्थिति को दर्ज करते हैं तथा अपनी दलित कहानियों के माध्यम से दलित साहित्य को एक मज़बूत आधार देने की कोशिश करते हुए नज़र आते हैं। दलित कहानीकारों का यह प्रयत्न जहाँ सृजनात्मक आवेग से खुद को तलाशने की प्रक्रिया के साथ सामाजिक परिवेश की गंभीर चुनौतियों से टकराता है। इन्ही कथाकारों की कहानी का परिचय उन स्थितियों तथा चरित्रों से कराता है।

हिंदी दलित साहित्य में कहानी के विविध उतार चढ़ावों, और कथित आन्दोलनों से अनेक दलित कहानी परिवर्तन हुए सामाजिक परिस्थिति में यथार्थ चित्रण की एक विशिष्ट धारा के रूप में सामने उभरकर आती हैं। जिसकी तरफ़ हिंदी साहित्य के समीक्षकों का ध्यान बहुत देर से गया है। हिंदी कथा साहित्य के कहानी में नई कहानी, अ-कहानी, समान्तर कहानी तथा फिर जनवादी कहानी आदि पड़ावों से गुज़रते हुए वर्तमान हिंदी कहानी का बहुत ही निकटता से संबंध प्रस्तुत हुआ है।

पाठक वर्ग ने कहानी की कल्पना लोक तथा रोमानी मायावी संसार से मुक्त होकर एक नयापन का अहसास महसूस कर रहा था। इसी के साथ दलित चेतना की कहानियों ने अपनी आंदोलनकारी विचारों से उपस्थिति दर्ज की। आठवें दशक में यह उपस्थिति और तेजी से उभरी इसमें मोहनदास नैमिशराय तथा ओमप्रकाश वाल्मीकि की क्रांतिकारी कहानियाँ निहित हैं। नवें दशक में भारतीय साहित्य में दलित कहानियों ने ख़ास पहचान निर्मित की है। हिंदी साहित्य के लिए दलित साहित्य की चर्चा नई नहीं थी। इस दशक में मोहनदास नैमिशराय, ओमप्रकाश

वाल्मीकि, सूरजपाल चौहान, श्यौराज सिंह बेचैन, डॉ. सुशीला टाकभौरे की कहानियाँ प्रमुख हैं। हिंदी दलित कहानी की यह आन्दोलनकारी, साथ ही साथ यह एक लम्बी संघर्ष यात्रा है जो सातवें दशक से लेकर नवें दशक तक काँटों पर सफ़र करते हुए लहू-लुहान होते हुए भी अपने विस्फोटक तेवर की पहचान बनाने में कामयाब रही है। हिंदी दलित कहानी ने समस्याओं का सामना किया है।

साहित्य जगत के इतिहास को देखे तो कहानी को सामाजिकता से जोड़ने का प्रयास प्रेमचंद ने किया। घीसू, माधव जैसे पात्रों का सृजन कर जीवन की वास्तविकताओं का साक्षात्कार प्रेमचन्द ने कराया और कहानियों को सामाजिकता से जोड़ कर जो भूमिका तैयार की उसमें सभी कथाकारों ने अपना-अपना योगदान दिया।

दलित कहानीकारों ने अपने सर्जनात्मक आक्रोशित आवाज़ को यथार्थ की भूमि पर खड़ा कर परिवर्तन के नए फैलाव स्थापित किया हैं। दरअसल सामाजिक विषमताओं, संघर्षपूर्ण परिस्थितियों, भेदभाव और अंतर्विरोधों को चित्रित करने की प्रवृत्ति उसने किसी दबाव अथवा प्रतिक्रिया के तहत नहीं की है। किन्तु यह उसका अपना स्वाभाविक एवं वस्तुनिष्ठ स्वरूप है।

आवेशपूर्ण बदलाव की पक्षधरता उसका जीवन मूल्य है। इस क्रांतिकारी यात्रा में जयप्रकाश कर्दम, सूरजपाल चौहान, बुध्द्शरण हंस,डॉ.सुरेश मुले, डॉ. दयानंद बटोही ने यथार्थपरक संवेदनशीलता एवं सामाजिक विचार-विमर्श की कहानियाँ लिखी हैं, साथ में डॉ. सुशीला टाकभौरे, रजतरानी मोजु, कुसुम मेघवाल दलित महिला की पीड़ा के बारे में लिखने में सफल हुई हैं। उन्होंने कुछ महत्वपूर्ण कहानियाँ लिखी है जिनमें प्रगतिशील तथा लोकतांत्रिक मूल्यों का समर्थन करनेवाले वर्तमान समय की कहानी है। हिंदी दलित कहानी धीरे-धीरे अपना स्वरूप ग्रहण कर विकास की ओर अग्रसर है।

प्रमुखत: दलित कहानियों में दो गुणों का होना आवश्यक है,पहला भेदभाव यानि व्यवस्था का विरोध करना तथा दूसरे जीवन में बदलाव का संकल्प बनाए रखना ये दोनों गुण मोहनदास जी की कहानियों में देखने को मिलता है। ओमप्रकाश वाल्मीकि का सलाम कहानी संग्रह में दलित जीवन की अनुभवों तथा संवेदनशीलता को उजागर करती श्रेष्ठ कहानियाँ संकलित की हैं। सलाम कहानी संग्रह में से अधिकांश कहानियाँ हंस पत्रिका में प्रकाशित हुई हैं। सुश्री सुशीला का यह कहानी-संग्रह दलित ज़िंदगीके यथार्थ को उदघाटित करता है। डॉ. सुशीला का मानना है कि दलित वर्ग का सही मायने में विकास न होने का कारण सही मार्गदर्शन का अभाव है। वे दलितोत्थान में डॉ. भीमराव अम्बेडकर की विचारधारा की संलग्नत मानना ज़रूरी सझती हैं। दलितों के जीवन का यथार्थ इन कहानियों में व्यक्त हुआ है प्रमुखतः महाराष्ट्र के दलितों की पीड़ा का रेखांकन इन कहानियों में है। लेखिका का भरपूर प्रयास रहा है कि संग्रह की कहानियाँ दलित युवा वर्ग में युगीन सत्यों का सामना करने का उत्साह व शक्ति का संचार करे। वे अपने वर्ग की कमजोरियों को चिन्हित कर अन्याय, शोषण,अत्यचार-अपमान और दमन के ख़िलाफ़ संगठित होकर जातिवाद व अस्पृश्यता का सफाया करने का प्रयत्न करें।

प्रस्तुत दौर हम देख सकते हैं कि दलित कहानी और कहानीकारों में काफी बदलाव आया है। आज भी नारी शोषण का शिकार तो जरी ही है, लेकिन अब उसने वक्त के परिवर्तन हुए स्वरूप के साथ विरोध करने की हिम्मत भी जुटा ली है। अपने पर हो रहे बलात्कार तथा अत्याचारों से वे भली-भाँति परिचित हैं और अवसर पाकर उसका विद्रोह करने की शक्ति भी है। दलितों द्वारा लिखित कहानी के नारी पात्र अब अपने को आज़ाद करनी चाहती हैं तथा उसके लिए इनमें साहस भी है, आत्म-विश्वास भी है और परिस्थितियों से जूझने की हिम्मत भी हैं। इस प्रकार दलित कहानी साहित्य उत्तरोत्तर अधिक समृध्द होता जा रहा है। भारतीय दलित जीवन की विभीषिकाएँ जहाँ

दलित कहानियों को जीवन से जोड़ते हैं, और ये कहानियाँ मानवीय सरोकारों को प्रतिबध्दता के साथ उजागर भी करती हैं।

वेदकाल से लेकर आज तक जातिप्रथा की व्यवस्था चलते आ रही है। आज विभिन्न क्षेत्रों में याने साहित्यिक, धार्मिक, वैज्ञानिक, तकनीकी, वित्तीय आदि क्षेत्र में बदलाव प्रगति हो रहे हैं। लेकिन जाति व्यवस्था के अतंर्गत उतनी मात्रा में बदलाव नहीं आया है। आदमी किसी जाति में ही जन्म लेता है, जीवनयापन करता है और जाति के साथ ही मरता है। लेकिन मरने के बाद भी उनकी जाति नहीं मरती। इस संदर्भ में डॉ. सुशीला टाकभौरेजी का वक्तव्य सटीक लगता है- "हिंदू समाज व्यवस्था में जाति ऐसी चीज़ है जो इन्सान के जन्म के साथ ही जुड़ जाती है और वह इन्सान के मरने के बाद भी नहीं जाती है।"३ इस वक्तव्य से यह पता चलता है सूरज जब तक रहेगा तब तक यह जाति व्यवस्था स्थिर रहेगी। प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से लोगों को इस व्यवस्था के कारण से कष्ट उठाना पड़ रहा है। जातिभेद के कारण ही हिंदू, इस्लाम लोगों में झगड़ा चलता है। उसी प्रकार सवर्णों से दलित लोगों को तरस खानी पड़ती है। ख़ास कर हिंदी दलित साहित्य में इस प्रथा के कारण होनेवाले समस्याओं का चित्रण अधिक मात्रा में देखने को मिलता है। आधुनिक संदर्भ में, आदमी शिक्षा के कारण हर एक समस्या के प्रति विद्रोह की भावना अपनाता है। उसी प्रकार जाति प्रथा के प्रति भी इनकी विद्रोह की भावना तेज़ पकड़ती है।

जानेमाने दलित कहानीकार डॉ.सुशीला टाकभौरेजी के 'संघर्ष' कहानी में 'शंकर' नामक लड़के को दलित होने के कारण बहुत संघर्ष करना पड़ता है। गाँव के कुछ लोग उनको अछूत मानते हैं। वह उसे अच्छा नहीं लगता। उनके मित्रगण उसके घर के अदंर नहीं आते और उन मित्रों के घर से उसे भगाते हैं। इस अपमान के बदले में वह जानबुझकर उन लोगों के घर के अदंर प्रवेश करता है। छुआ-छूत माननेवाले लड़कों से बदला लेना चाहता है। राह में चलते समय शंकर अपने सवर्ण मित्रों को अपनी टांग अड़ाकर गिराकर मन ही मन ख़ुश हो जाता है। गिराकर जाति के प्रति विद्रोह व्यक्त करता है।

वाल्मीकिजी के 'प्रमोशन' कहानी में दिनेशपाल जाटव उर्फ़ दिग्दर्शन पहले स्वीपर बनके काम इसी प्रकार डॉ.दयानंद बटोही जी के 'भूल' कहानी में भी जातिप्रथा के प्रति विद्रोह की भावना उभरकर आयी है। जैसे कि इस कहानी के नायक रमेश और नायिका पार्वती अपने प्यार के संदर्भ में आड़े आनेवाले जातिप्रथा के संदर्भ में अपनी चिंता व्यक्त करते हुए रमेश कहता है कि- "पारो वह दिन कब आयेगा जब समाज में जाति भावना का नाश हो मानवता पराकाष्ठा पर होगी, काश हम दोनों के लिए जाति न होती।"४

डॉ.ओमप्रकाश वाल्मीकिजी के कहानी 'सपना' में भी जातिप्रथा की विरोध भावना उभरकर आयी है। सवर्ण लोग गौतम नामक दलित आदमी से पूरे मंदिर का निर्माण कार्य कर लेते हैं। जब मंदिर में बालाजी की प्रतिमा की प्राण प्रतिष्ठा कार्यक्रम में जब गौतम अपने परिवार के साथ आकर आगे की पंगत में बैठता है तो सवर्ण उसका विरोध करते हैं। गौतम इनके क्रूरता से क्रोधित होकर पंडाल करता था। बाद में प्रमोशन होकर 'मज़दूर' बन जाता है तो सवर्ण लोग मानने को तैयार नहीं होते। इनको सभी स्वीपर के रूप में ही देखते हैं। इस व्यवहार से दिनेशपाल जाटव क्रोधित होकर इस प्रकार बताता है- "स्वीपर था, अब नहीं हूँ अब मैं मज़दूर हूँ कामगार मज़दूर-मज़दूर भाई-भाई इनक़लाब ज़िंदाबाद"५

'रिहाई' कहानी में छोटे छुटकू के माँ-बाप को गोदाम के मालिक लाला गोदाम के अदंर काम करने के लिए ग़ुलाम के रूप में रख लेता है। जब इन दोनों का देहांत हो जाता है तो इनका बेटा छुटकू इसका बदला लेना चाहता है। वह एक दिन गोदाम के मालिक के कार का पीछा करते गोदाम तक पहुँचता है। गोदाम में प्रवेश करके पूरे गोदाम को आग लगा देता है।

'कूड़ाघर' कहानी में अजबसिंह को एस.सी होने के नाते मकान मालिक घर से निकाल देता है- "मकान ख़ाली कर दो तुम लोगों ने मकान किराए पर लेते समय यह नहीं बताया था कि तुम एस.सी हो।"६

शिक्षित सवर्णों के इस कथन से अजबसिंह का ख़ून उबल आया था। उसने कहा- "बताया नहीं मतलब उस समय तो बहुत प्रगतिशील बन रहे थे अरे तुमने पूछा होता तो हम बताते यह तो कोई बात नहीं हुई।"७ आगे पत्नी से कहता है- "इनसे जितना डरकर बात करेंगे ये हमें दबाने की कोशिश करेंगे। तुम इनकी फ़ितरत नहीं जानती। जात-पाँत के सवाल पर ये सब इकट्ठे हो जाएँगे, चाहे आपस में जितना एक-दूसरे के ख़िलाफ़ लड़े।"८ अजबसिंह के शब्दों में पूरे सवर्ण जाति के प्रति विद्रोही भावना स्पष्ट होता है।

'शवयात्रा' कहानी में सुरजा के द्वारा पक्का मकान बनाना गाँव के प्रधान जी बलरामसिंह को अच्छा नहीं लगता। उनका कहना था कि- "अटीं में चार पैसे आ गए तो अपनी औक़ात भूल जाता है। बल्हारों को यहाँ इसीलिए नहीं बसाया था कि हमारी छाती पर हवेली खड़ी करेंगे वह ज़मीन जिस पर तुम रहते हो, हमारे बाप-दादाओं की है। जिस हाल में हो रहते हो किसी को एतराज़ नहीं होगा। सिर उठा के खड़ा होने की कोशिश करोगे तो गाँव से बाहर कर देंगे।"९ बलराम सिंह का एक-एक शब्द तीर की तरह सुरजा पर लगा था।

सवर्णों की इस अमानुषीय व्यवहार पर सुरजा को ग़ुस्सा आया। उसने अपने बेटे से कहा- "तू सच कहता था कल्लू यो गाँव रहणे लायक ना है।" आगे उसमें आत्मविश्वास जागा, "ना बेटे, मकान तो ईब बणके रहवेगा जान दे दूँगा, पर यों गाँव छोड़के न जाऊँगा।"१० दलित तो उसकी वेदना, पीड़ा और उसके साथ किये गये अमानुषीय बर्बर व्यवहार के प्रति सदियों से संवेदनशील रहा। लेकिन अब उसमें इसके विरूद्ध लड़ने की शक्ति आ गई है।

'प्रमोशन' कहानी में जब सुरेश मज़दूर होने पर भी पत्नी को डर लगता है। उसके शब्दों से यह स्पष्ट है- "अजी, तुम भी किस चक्कर में पड़ गए हो अपनी डयूटी करो, घर वापस आ जाओ कुछ ऊँच-नीच हो गया तो क्या करेंगे?११

सुरेश में गहरा आत्मविश्वास था। उसने शांति को डाँट दिया- "तू हमेशा रहेगी डरपोक ही मज़दूर बने हैं तो मज़दूरों का दर्द भी तो जानना पड़ेगा कल तक मैं एक स्वीपर था जिसके दर्द का किसी को ख्याल भी नहीं था न वे अपने दर्द को ठीक से जानते हैं इसीलिए वे अपना कोई संगठन भी ना बना सके हैं।'१२सुरेश तो दलितों का दु:ख-दर्द समझता है और मज़दूरों के साथ यूनियन में शामिल होकर अपने अधिकारों के लिए लड़ना चाहता है।

ग्रामीण अथवा क़सबाई अशिक्षित दलितों के जीवन की अपेक्षा शिक्षित दलितों के प्रति सवर्णों का प्रत्यक्ष छुआ-छूत या शारीरिक शोषण कम हैं। अप्रत्यक्ष रूप से उनका शोषण किया जाता है।

'दिनेशपाल जाटव उर्फ़ दिग्दर्शन' में दिनेशपाल को दलित होने के कारण अख़बार के कार्यालय से अपमानित होकर निकलना पड़ा। "अब पत्रिकाओं में भी आरक्षण माँगनेवाले आने लगे अब भंगी-चमार भी संपादक बनेंगे एक-एक शब्द सुनकर उसके मन में विद्रोह भावना लावे की तरह फूटने लगा। लेकिन वह कुछ नहीं कह पाया। उसका विद्रोह आँखों से फूट पड़ा।"१३

ओमप्रकाश वाल्मीकि द्वारा लिखित 'बैल की खाल' कहानी में आर्थिक विपन्नता का चित्रण मिलता है। काले और भूरे ग़रीब दलित थे। शराब के कारण वे मृत बैलों की खाल निकालकर बेचना, उसी पैसे से जीविका चलाना उनका दैनिक कार्य था। एक दिन अचानक पंडित बिरिजू मोहन का बैल रास्ते में मर जाता है। मृत बैल को निकाल ने के लिए इन दोनों को बुला भेजने पर भी नहीं मिलते हैं तो पंडित को ग़ुस्सा आ जाता है। जब पता चलते ही काले और भूरे दोनों रस्सी लिए आते हैं तो पंडित उन दोनों को डाँटते हुए- "कहाँ गए थे भोसड़ीके तड़के से ढूंढ़-ढूंढ़ के गोड्डे टूट गए हैं। अब आ रहे हो महाराज की तरियो इस बैल को कौन उठायेगा तुम्हारा बाप"१४ गालियाँ पड़ने पर भी दोनों बिना कुछ कहे अपने काम में व्यस्त हो जाते हैं। बैल को वहाँ से हटाते हैं।

कँवल अपने दोस्त की शादी को उलझन से बचाने के लिए वहाँ से चला जाता है। "क्षण भर को कंवल पंडित के पास रूका। उसने कंधे पर लटके बैग को एक बार फिर उसने कसकर पकड़ लिया था। पंडित को दौड़ाने का विचार उसकी चेतना में उभरा। एयर्बैंक पंडित की खोपड़ी पर मरने के लिए बैग कंधे से उतारा- अरविंद की छलछलाई आँख सामने आ गई। हाथ वहाँ रूक गए थे।"१५ शिक्षित वर्ग भेदभाव को भुलाना चाहता है। इसका उदाहरण है अरविंद,

कंवल और विष्णुदत्त नैथानी। लेकिन परंपरागत विचारों को पकड़कर रहनेवाले पंडितजी जैसे ब्राह्मण भेदभाव को भूलने नहीं देते। प्रत्येक क्षेत्र में प्रगतिशील विचारधारा से आगे बढनेवाला भारतीय सिर्फ़ जातिगत रूढियों में बदलाव नहीं ला पाया। जाति व्यवस्था के दासत्व से मुक्ति के लिए दलितों को संगठित होकर लड़ना होगा।

वह अब पहले की दलित नारी नहीं रही। उसमें भी विद्रोह की शक्ति आ गयी है। वह हार को जीत में बदलना चाहती है। बिरमा ने सभी को संबोधित करते हुए कहा- "इस हार पर मुँह क्यों लटका रहे हो यह अतं न है- तुम लोगों नें मेरे विश्वास को जगाया है इसे मरने मत देणा।"१६ वह आगे संघर्षरत रहना चाहती है। सभी को अपने शब्दों से जागृत करती है। युवा पीढ़ी में संघर्ष के लिए चेतना जागृत कर बिरमा न्याय का रास्ता बनाती है।

दलित ही नहीं सवर्ण भी, जाति व्यवस्था के बंधनों को तोड़ सकता है। 'ब्रम्हास्त्र' कहानी में अपने पिता और पंडित द्वारा मित्र को अपमानित करने पर अरविंद कहता है- "कंवल मेरा सबसे अच्छा दोस्त है.. हमारे बीच जात-पाँत कभी नही आयी । मैं उसे इस तरह घर बुलाकर बेइज्ज़त नहीं कर सकता।"१७ वह जाति के भेद-भाव को मिटाना चाहता है। अत: कहा जा सकता है कि वर्ण व्यवस्था की दिवार अब टूटने के कगार पर है।

'रिहाई' कहानी में छोटा छुटकू अपने माँ-बाप के मरने से उस पर कोई असर नहीं हुआ। यह कोठरी की ओर दौड़ा। कोठरी के आले में एक माचिस रखी थी। उसी पर अचानक उसकी नज़र पड़ी उसने लपककर माचिस उठाई। दौड़ते हुए गोदाम में घुसा। माचिस की तीली जलाकर बोरे में लगा दी। देखते ही देखते बोरा सुलग उठा। बोरे को सुलगते देख छुटकू को लगा जैसे उसने दुश्मन को पहचान लिया है।"१८ छुटकू जैसे छोटे लड़के में भी जातीयता ने रोष जगाया है। वह भी इससे मुक्ति चाहता है। "अनजान और अजनबी सड़क पर दौड़ते हुए छुटकू को लग रहा था जैसे वह गोदाम की चार दिवारी से हमेशा के लिए मुक्त हो गया है।"१९

भारतीय समाज व्यवस्था में परिवर्तन आरंभ हो चुका है। उच्चवर्ग ने भी इससे सहयोग प्रदान किया है जो मनुष्यता के उभरने का संकेत है।

'मैं ब्राह्मण नहीं हूँ' कहानी में अमित से शादी करने से रोकने पर सुनिता कहती है- "पापा आप बने रहिए श्रेष्ठ..ब्राह्मण.. मिरासी से ऊँचे। लेकिन मैंने कभी भी अपने आपको ब्राह्मण नहीं माना यह सच्चाई है। न मैंने 'शर्मा' होने की आड़ में कभी ब्राह्मण बनने की कोशिश की। मेरे लिए ब्राह्मण होना ही इसांन की श्रेष्ठता का प्रतीक नहीं है। यह एक भ्रम है जिसमें सभी ऊँच-नीच का खेल खेल रहे हैं। आप जितना मातम मनाएँ.. मैं शादी अमित से ही करूँगी। उसके पुरखों का मिरासी होना मेरे लिए मायने नहीं रखता कहकर वह बाहर की ओर लपकी।"२०

यहाँ सुनीता नयी पीढ़ी का प्रतीक है। जाति व्यवस्था के बंधनों से मुक्ति के लिए वह कोशिश करती है। उसके शब्दों में जाति व्यवस्था के हीन भावना पर आक्रोश है। बंधनों से मुक्ति का मार्ग नई पीढ़ी के हाथ में है।

निष्कर्ष

दलित साहित्य लिखनेवालों में दो पक्ष हम देख सकते हैं, एक है दलित साहित्यकार और दूसरा ग़ैर दलित साहित्यकार । दलित साहित्यकार, ग़ैर दलित साहित्यकारों को दलित रचनाकार नहीं मान रहे हैं । इसका मूल कारण यह है कि दलित साहित्यकार का विचार है ग़ैर दलित साहित्यकार दलित लोगों के जीवन को दूर से महसूस करते हैं । लेकिन दलित साहित्यकार अपने में भोगे हुए निजी घटनाओं और अनुभवों को शब्द बद्ध करते हैं । इस प्रकार उनके लेखन में सच्चाई ज़्यादा होने के कारण ग़ैर दलित साहित्यकारों को कम मान्यता दे रहे हैं ।

दूसरा, पक्ष देखे तो सवर्ण लोग दलित साहित्यकारों से लिखित साहित्य को न मानते हुए उस साहित्य को ग़लीज़ साहित्य कहकर श्रेष्ठ साहित्य के पक्ष से दूर रखने का ढोंग रचा रहे हैं । दु:ख दर्द और उन पर हो रहे अत्याचार, शोषण, संघर्ष आदि के वास्तविक और निहित सत्य को उपेक्षित किया जा रहा है ।

संक्षेप में कह सकते है कि समकालीन कहानी एक किशोर भावुकता की नज़रों से स्त्री-पुरुष सम्बन्धों का रंगारंग चल चित्र भी है तो, कहीं भय आतंक विवशता, बुभुक्षा में जीते हुए स्त्री सम्बंधों का वांछित फैण्टेसी लोक भी है। जिसे हम विविध रचनाकारों की कलम से मूर्तिमान होते हुए देख सकते हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूचि

१) डॉ. आर. प्रेमानंदन- तेलगु साहित्य में दलित चेतना, स्रवंति, अक्तूबर, २००५, पृ. सं. २५.

२) धनंजय वर्मा- हिन्दी कहानी का रचनाशास्त्र, पृ. सं. १०९.

३) डॉ. सुशीला टाकभौरे- संघर्ष, पृ. सं, १६

४) डॉ. दयानंद बटोही- सुरंग, पृ सं, ५२.

५) ओमप्रकाश वाल्मीकि - प्रमोशन, पृ. सं, ४८.

६) ओमप्रकाश वाल्मीकि - कुडाघर, पृ. सं, ५७.

७) ओमप्रकाश वाल्मीकि - कुडाघर, पृ. सं, ५७.

८) ओमप्रकाश वाल्मीकि – कुडाघर, पृ. सं, ५८.

९) ओमप्रकाश वाल्मीकि - शवयात्रा, पृ. सं, ३९.

१०) ओमप्रकाश वाल्मीकि ट्र शवयात्रा - पृ. सं, ३९.

११) ओमप्रकाश वाल्मीकि- शवयात्रा, पृ. सं, ४६

१२) ओमप्रकाश वाल्मीकि- प्रमोशन, पृ. सं, ४६.

१३) दिनेशपाल जाटव उर्फ दिग्दर्शन, पृ. सं , ६९.

१४) ओमप्रकाश वाल्मीकि - बैल और सलाम खाल, पृ. सं, ३३.

१५) ओमप्रकाश वाल्मीकि – ब्रम्हास्त्र, पृ. सं , ८७.

१६) ओमप्रकाश वाल्मीकि - यह अतं नहीं, पृ. सं, २८.

१७) ओमप्रकाश वाल्मीकि- ब्रम्हास्त्र, पृ. सं, ८६.

१८) ओमप्रकाश वाल्मीकि- मैं ब्राम्हण नहीं हूँ, पृ. सं, ६६.

१९) ओमप्रकाश वाल्मीकि - रिहाई, पृ. सं, ७९.

२०) ओमप्रकाश वाल्मीकि - रिहाई, पृ. सं, ८०.

LBP PUBLICATION